शील कौशिक

दूसरा आलाप

ई-मेल-sheelshakti80@gmail.com

"यार रमेश! एक बात पूछूं? तू बुरा तो नहीं मानेगा?"

"कैसी बात कर रहा है तू, बोल न।"

उस दिन तुम्हारे निमंत्रण पर मेरे बेटे-बहू मेरे साथ डिनर पर आए थे, तो मेरी बहू को बहुत बुरा लगा था।"

"किस बारे में...?"

"हाँ, हाँ पापा! आप तो तारीफ़ करते नहीं थकते कि मेरा दोस्त रमेश और उसकी पत्नी अपनी माँ का बहुत ख्याल रखते हैं...माँ को घर से बाहर फेंक रखा है उन लोगों ने... "

मैंने उन्हें रोका, "फेंका नहीं, गैराज के खुले कमरे में रखा है।"

"हाँ, सच्चाई तो यही है। अच्छा! तू तो कितनी ही देर मेरी माँ के पास बैठता है, उनसे घर-परिवार की बातें करता है। क्या तूने माँ को कभी दुखी, उदास या शिकायत करते देखा है? फिर हमारे लिए दिखावा करने से जरूरी है माँ की खुशी। माँ ग्रामीण परिवेश में खुले में पली-बढ़ी है। भीतर वाले कमरे में उनका दम घुटता है। अकेलेपन का अहसास होता है। वहाँ पीछे किचन गार्डन है, फूल लगे हैं। आम का पेड़ है...चिड़िया का घोंसला है... पक्षी चहचाहते हैं। पोता वहाँ जिम एक्सरसाइज करता है। पोती सखियों के संग खेलती है। पड़ोस की माया जब-तब आकर माँ से कुछ न कुछ पूछती रहती है। सुधा माँ के सिर में तेल वहीं बैठकर लगाती है, वहीं बाथरूम में नहलाती है। तब माँ को लगता है कि वह अकेली नहीं, हरदम कोई न कोई उसके पास रहता है और जब हम घर नहीं होते, तब मेन गेट के सामने होने के कारण माँ इस कमरे से बाहर दिन में कई बार चक्कर काट आती है। उसे सड़क पर आते-जाते लोग दिखते हैं। और तो और उनकी नींद व आराम में खलल न पड़े, वह सुधा को बाकी कोठी को ताला लगाकर जाने के लिए कहती है। सच पूछो तो हमारा मन भी वहीं लगता है। सारी रौनक तो वहीं माँ के इर्दगिर्द होती है। आते-जाते हम माँ से बतियाते हैं... हँसी ठिठौली करते हैं।"

"ठीक कहते हो यार!"

वह मन ही मन स्वयं से तुलना कर अपने गिरेबाँ में झाँकने लगा। उसके कमरे में सब सुविधाएँ हैं, बस बातचीत करने वाला कोई नहीं।

अब वह दोस्त से आँखें चुराने लगा।

गिद्ध और गिद्ध

शील कौशिक

गिद्ध मचल उठा है। उसकी भूख बढ़ गई है। अपने शक्तिशाली पंख फड़फड़ाता, बेसब्री से माँस नोंचने के लिए पेड़ पर वह चौकन्ना उत्सव मनाने की तैयारी में बैठा है।

आ...हा! तोपों से गोले बरसने शुरू हो गए हैं। गोलों से शहर एक मलबे में तबदील हो गया है। कितने बच्चे, बूढ़े, जवान बिन कारण मौत के मुँह में चले गए हैं। गिद्द माँस खाने के लिए पेड़ से नीचे उतरा।

उसने देखा परिवार में जिंदा बची बुढ़िया अपनी आँख बंद किए सारा गम अपने बचे घर को तोड़ने में ताबड़तोड़ जुटी है...

एक प्रेमिका विजयी भाव लिए, हंसते हुए जंग से सलामत लौटकर आए अपने प्रेमी की छाती नोंच रही है...

बम्ब से टूटी छत के नीचे बैठा एक बच्चा अपने झुलसी किताब के क- कबूतर अक्षर पर से कालिख साफ कर रहा है।

"माँ देखो मेरा क-कबूतर जल रहा है...

युद्ध की लपटों में झुलसा एक कबूतर पेड़ पर मुँह में शांति का फूल लेकर मुस्कुरा रहा है...वह शांतिदूत का कर्तव्य निभाने के प्रयास में है। किंतु एक जांबाज घायल सिपाही अपनी बंदूक उस पर तान उसे भगाने का प्रयास कर रहा है। उसके भीतर बैठा कुशांति का कबूतर उसे जख्मी हाथों से बंदूक उठाने को उकसा रहा है।

नीचे माँस खाने आया दिग्भ्रमित गिद्ध वापस पेड़ पर बैठ अब अहिंसावादी चिंतक बन गया है... मानव और उसके जलते भविष्य को बचाने की सोच में डूबा है। युद्ध विराम... युद्ध विराम...

कितने ही वीभत्स दृश्यों के गवाक्षों का साक्ष्य, गिद्ध मानव बन गया है और मानव गिद्ध। उसके अंदर बैठा गिद्ध क्रोधित हो चोंच मार रहा है।

भविष्य की पदचाप

रामकृष्ण दो दिन पहले ही गाँव से शहर अपनी पत्नी का इलाज कराने आया थाI वह अपने दोस्त मधुदीप के यहाँ ठहरा थाI गाँव में नित्य सवेरे खेतों में घूमने के आदी रामकृष्ण को यहाँ घुटन महसूस होने लगीI वह सुबह जल्दी उठा और इस पाश कालोनी में सैर करने निकल पड़ाI पर उसे ताजगी का अहसास न हुआI तभी उसने ताजगीभरी हवा का एक झोंका महसूस किया और वह उस ओर बढ़ चलाI उसे कुछ दूरी पर भिन्न-भिन्न प्रकार के पेड़ों का झुरमुट दिखाई पड़ाI वह उनके समीप गयाI चारों तरफ ऊँची दीवार और गेट देखकर ठहर गया। लगता है, यह कोई बड़ा पार्क हैI वह खुश हो गयाI किंतु गेट के पास लगे बोर्ड को देख कर वह चौंका –"हैं! 'फेफडों की वर्कशॉप'!! मोटर-गाड़ी की वर्कशॉप तो सुनी है; पर, ये फेफडों..."

तभी एक आदमी हाथ में रजिस्टर लिए दौड़कर आया, "ये लो साहब, एंट्री भर दोI"

"एंट्री भर दो! मतलबI"

"एंट्री नहीं भरोगे तो पता कैसे चलेगा कि आप किस समय अंदर आए और कितनी देर पार्क में रहे?"

"क्यों! पाबंदी है क्या? जितनी मर्जी देर तक यहाँ रहूँ मैं! पार्क तो सार्वजनिक यानी सबके लिए होते हैंI"

"नहीं साहब! यहाँ ऐसा नहीं है, प्रत्येक मिनट के हिसाब से पैसा चुकाना पड़ता हैI"

"अजीब नियम है यह?"

परस्पर उनकी बहस सुनकर एक सूटेड-बूटेड आदमी जो पार्क का मालिक लग रहा था, आया और बोला, " इसमें अजीब क्या है भाई! बच्चे स्कूल बैग के साथ आक्सीजन सिलेंडर ले जाते हैं, वह क्या मुफ़्त आता है?"

रामकृष्ण को लगा, जैसे किसी ने उसके अंदर की सारी हवा खींच ली हो। वह मुश्किल से कह पाया, "बस रहने दो! ये शहर के चोंचले हमें समझ नहीं आते। हमें ज्ञान मत दो, हम अज्ञानी ही भले।" यह कह कर वह पलटा और बुदबुदाया- "हुँह...! फेफड़ों की दुकान!"